Chakraborty
Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

ISSN 2350 CHAL
वर्ष : 06, अंक : 23, जुलाई-सितम्बर 2019

शोध, समीक्षण, सृजन एवं संचार का

मुक्तांचल

नयी सदी के आर-पार हिंदी कविता के पचास साल

विद्यार्थी मंच

मूल्य - 50 रुपये

Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

ISSN 2350-1065 MUKTANCHAL

शोध, समीक्षण, सृजन एवं संचार का

मुक्तांचल

त्रैमासिक

वर्ष-6, अंक-23, जुलाई-सितम्बर 2019

संपादक : डॉ. मीरा सिन्हा

अतिथि संपादक : प्रो. मनीषा झा

प्रकाशक : आनंद कुमार सिन्हा

कला सम्पादक : शुभागता श्रीवास्तव

सगस्त पद अवैतनिक

व्यवस्थापन एवं प्रबन्धन :

परमजीत कुमार पंडित, विनीता लाल, सुशील कुमार पाण्डे, विनोद यादव, पार्वती कुमारी साव, प्रभा उपाध्याय, गुड़िया राय, विद्या रजक, नर्गीना लाल दास, सोनू संगम।

परामर्श एवं विशेष सहयोग :

प्रो. शशि मुदीराज : प्राक्तन अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सेन्ट्रल यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

प्रो. अरुण होता : अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, स्टेट यूनिवर्सिटी, वारासात

प्रो. मुक्तेश्वर नाथ तिवारी : विश्व भारती, शांतिनिकेतन

डॉ. पंकज साहा : खड़गपुर कॉलेज, पश्चिम बंगाल

डॉ. शुभ्रा उपाध्याय : खुदीराम बोस कॉलेज, कोलकाता

निशांत : काजी नजरूल विश्वविद्यालय, आसनसोल

रामप्रवेश रजक : हिन्दी विभाग, कलकत्ता विश्वविद्यालय

सुलेखा कुमारी : विद्यासागर कॉलेज, कोलकाता

पत्रिका में व्यक्त विचारों में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं 'मुक्तांचल' से संबंधित सारे विवादों के लिए न्याय-क्षेत्र कलकत्ता उच्च न्यायालय होगा।

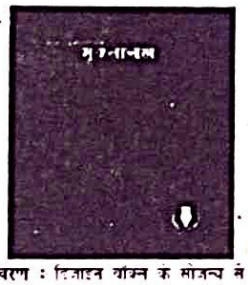

आवरण : डिजाइन बॉक्स के सौजन्य से

संपादकीय कार्यालय :

आधुनिक अपार्टमेंट, 6/2/1 आशुतोष मुखर्जी लेन
सलकिया, हावड़ा-711 106, पश्चिम बंगाल

संपर्क : 0332675 1686, 098314 97320

ई-मेल : muktanchalquaterly2014@gmail.com

sinhameera48@gmail.com

लेखकों से अनुरोध किया जाता है कि मुक्तांचल में प्रकाशन के लिए सामग्री यूनिकोड वर्ड(Unicode Word) में भेजें।

मुक्तांचल : A/C-50200014076551

HDFC BANK. BURRABAZAR.

KOLKATA-700007

IFSC CODE:-HDFC0000219

मुद्रक : शिक्षण, 50, सीताराम घोष स्ट्रीट, कोलकाता-700009

पत्रिका का मूल्य

एक अंक-50 रुपये

सदस्यता शुल्क

वार्षिक-200 रुपये, आजीवन-2000 रुपये

संस्थाओं के लिए

वार्षिक-250 रुपये, आजीवन-2500 रुपये

डाकखर्च(प्रत्येक अंक के लिए) अतिरिक्त 30 रुपये देय होगा।

'केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा से सहयोग प्राप्त'

Chakraborty
Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

अवस्थिति

शो ध स मी क्ष ण सृ ज न सं चा र

संस्तुति

आलेख

08 मनीषा झा : कविता के पचास साल : समकालीन कविता
12 डॉ. ओमप्रकाश पाण्डेय : समकालीन हिंदी कविता : दशा और दिशा
19 सुधीर रंजन सिंह : कविता और समकालीनता
23 डॉ. प्रकाश कुमार अग्रवाल : समकालीन कवियों की समसामयिक दृष्टि

अनुशीलन

28 रामनिहाल गुंजन : ध्रुवदेव मिश्र पाषाण की काव्य-संवेदना और दृष्टि
34 परशुराम : सृजनशीलता के धरातल पर संघर्ष
42 प्रो. दामोदर मिश्र : मुक्तिबोध का काव्य दर्शन
47 निशांत : हिंदी कविता का पिकासो : विष्णु खरे

विमर्श

56 विमल वर्मा : ध्वनि में क्रिया भरी है और क्रिया में बल है
63 जयप्रकाश मानस : कवि की उपस्थिति

गवेषणा

68 डॉ. विनय कुमार पटेल : समकालीन हिंदी कविता में आदिवासी स्वर
74 डॉ. सारदा बैनर्जी : राजेश जोशी : लोकतंत्र की तलाश में
80 डॉ. शशि शर्मा : समकालीन कविता में समय, समाज और संस्कृति : सन्दर्भ स्त्री कलम

समय की शिला पर

87 स्वप्निल श्रीवास्तव : संवेदना की संरक्षक है कविता

कविता

90 राजवंती मान : मेरी दादी, अकाश छोटा है, सूखते तालाब, दूगी
92 रंजीत वर्मा : आरक्षण की थाप पर हम नहीं नाचेंगे, मुश्किल है स्त्री की प्रतिभा पर बात करना
94 पंखुरी सिन्हा : दुनिया भर का नक्शा, अमूर्त प्रेम, नंगे प्रेम पत्र
96 कालिका प्रसाद उपाध्याय 'अशेष': अपशब्द का मीठा जहर ही अच्छा है, मैं डरता हूँ
98 मधु सिंह : तुम ले चलो मुझे, स्त्री का आदिम इतिहास, चुप्पी, मौत और जिंदगी

Chakraborty
Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

समकालीन कविता में समय, ...स्कृति : सन्दर्भ स्त्री कलम

डॉ. शशि शर्मा

वर्तमान समय विसंगतियों से ग्रसित बेहद जटिल समय है। पूँजीवादी शक्तियाँ पारंपरिक मूल्य और विचारों को दरकिनार करते हुए भोगवादी संस्कृति के सन्दर्भ में नए मूल्यों और विचारों को स्थापित कर रही हैं। भूमंडलीकृत समाज में अर्थ का वर्चस्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। बाजारवाद अपने चरम पर है। 'मूल्यहीनता' मूल्य बन गया है। चरित्रहीनता चरित्र का उत्कर्ष कहला रहा है। उपभोग जीवन का मूलमंत्र बन गया है और शोषण-दोहन ताकत की निशानी। लोकतांत्रिक व्यवस्था के कर्णधार अपनी स्वार्थवृति में आमजन के मौलिक अधिकारों को महज मुद्दा बनाकर आरोप-प्रत्यारोप को बढ़ावा दे रहे हैं। दरअसल यह समय सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, नैतिक दृष्टि से घोर पतन का युग है। ऐसे पतनोंमुख समय में कोई भी सच्चा सर्जक अपने सृजन-कर्म के जनोन्मुख दायित्व से मुँह नहीं फेर सकता। जहाँ तक बात समकालीन कविता की है तो समकालीन कविता प्रतिबद्धता और व्यापक जन सरोकार की कविता है। समकालीन कविता का दायरा विस्तृत है। वह अपने समय के सभी महत्त्वपूर्ण प्रश्नों से टकराती है।

समकालीन कविता में कवयित्रियों की वृहत उपस्थिति देखी जा सकती है। एक समय था जब स्त्री कलम को महज स्त्री की व्यथा-कथा का आधार मान उसकी सृजनात्मक बौद्धिकता को कमतर करके आंका गया। साहित्यिक समाज की इस संकुचित सांच को तोड़ते हुए कवयित्रियों ने अपने समय, समाज और संस्कृति की सूक्ष्म पड़ताल करते हुए अपनी रचनाशीलता से पाठक और आलोचक वर्ग को विस्मित कर दिया। बदलते सामाजिक परिदृश्य पर इनकी कलम से वह आग निकली कि इनकी लेखनी को नजरअंदाज करना नामुमकिन हो गया। राजनीति, किसान-मजदूर, आदिवासी, बच्चे, उपभोक्तावादी संस्कृति, स्त्री, भूमंडलीकरण, बाजारवाद, जैसे समसामयिक विषयों पर इनका हस्तक्षेप सहज दृष्टिगत है। पेड़ के प्रतीक के माध्यम से समकालीन कवयित्री मनीषा झा ने स्त्री लेखन को कमतर करके आंकने वाले साहित्यिक समाज की मंशा को जाहिर करते हुए लिखा – *''तुम्हारी यह चुप्पी उन्हें मजबूत बनाती है/ तुम्हारे खिलाफ/ जबकि तुम चाहो तो तूफान के गले मिल सकते हो पेड़, तुम्हारी ही ताकत पर/ जंगल टिका हुआ है।''*

जाहिर है कि समकालीन कवयित्रियों के लिए सृजनात्मकता मात्र स्त्री विमर्श

Chakraborty
Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

का पर्याय न होकर अपने समय, समाज और संस्कृति के बहुआयामी सत्य को उजागर करने का एक ठोस माध्यम है। इन कवयित्रियों की कविताओं में उन तमाम शक्तियों के प्रति संघर्ष चेतना दिखाई पड़ती है जो समाज में अमानवीयता को प्रश्रय देते हैं। समकालीन कविता में कवयित्रियों की कई पीढ़ी सक्रिय है। जिनमें अनामिका, कात्यायनी, सविता सिंह, नीलेश रघुवंशी, चित्र सिंह, ममता कालिया, निर्मला पुतुल, मनीषा झा, रंजना जायसवाल, किरण अग्रवाल, ज्योति चावला, यशस्विनी पांडेय, पंखुरी सिन्हा, वर्तिका नंदा, उमा झुनझुनवाला, निर्मला तोदी आदि प्रमुख हैं।

राजनीति समकालीन दौर का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। राजनीति के जन-निरपेक्ष रवैये से समकालीन कवयित्रियाँ किस तरह आहत हैं इसे इनकी कविताओं में अभिव्यक्त आक्रोश और तल्खी के माध्यम से समझा जा सकता है। पूंजीपति और राजनीति के संयुक्त सम्मेलन से समाज का कितना विनाश हुआ है और हो रहा है, इससे हम अपरिचित नहीं है। भूख, गरीबी, बेबसी और लाचारी के साथ करोड़ों लोग जीवनयापन करने को बाध्य है। वर्त्तमान स्थिति यह है कि 'जनसेवकों' के खाते में करोड़ों रुपये मिल रहे हैं और 'जन' 'लाल कार्ड' लिए सपरिवार आत्महत्या कर रहा है। कात्यायनी की 'नयी ईश वंदना','आस्था का प्रश्न', 'नए रामराज्य का फरमान', निर्मला पुतुल की 'ढेपचा के बाबू' सविता सिंह की 'देश के मानचित्र पर', मनीषा झा की 'आजू-बाजू में' उमा झुनझुनवाला की 'अभिशप्त समस्याएँ' आदि कविताएँ राजनीतिक विसंगति को बहुआयामी सन्दर्भों में चित्रित करती है। समकालीन कवयित्री कात्यायनी 'नयी ईश वन्दना' कविता में सत्तासीनों को 'प्रभु' संबोधित करती हुई उनकी जन-निरपेक्षता, हृदयहीनता, निरंकुशता को जिस सूक्ष्मता से उघारती है, वह अद्भुत है— "*प्रभु! कर्ज दे और दिला।/ कुछ खा और खिला।/ प्रभु! हमारे दिलों में भक्ति भर!/ विचार हर!/ विवेक हर!/ तर्क से हमें मुक्त कर!/...हड़तालियों को कुचलवा दे प्रभु,/ जो नहीं रहना चाहते भूखे,/ उन्हें गोलियाँ खिला दे।/ प्रभु! जनतंत्र को बचा/ जरूरत हो तो आपातकाल ला।*"

स्पष्ट है कि कवयित्री वर्त्तमान राजनीतिक परिदृश्य से अनभिज्ञ नहीं है। राजनेताओं के लिए लोकतांत्रिक संवैधानिक व्यवस्था का 'लोक' 'वोट बैंक' में परिणत हो चुका है और राजनीति 'शाम, दाम, दंड, भेद' की नीति का पर्याय बन चुका है। जनता के मूलभूत सरोकार उनके लिए विपक्ष को कमजोर करने का मुद्दा मात्र बनकर रह गया है। सामान्य जनता के प्रति सच्ची जनसेवा का घोर अभाव आज की राजनीति का कड़वा सच है।

समकालीन कवयित्रियों ने अपने समय के परिवर्तन और प्रभाव को अपनी कविताओं में सशक्त ढ़ंग से चित्रित किया है। शोषण और दोहन की परंपरा नवीन नहीं है महज उसका रूप परिवर्तित हुआ है। वर्त्तमान समय पर दृष्टि डालें तो पाएंगे कि पूँजीवाद के प्रभाव स्वरूप परम्परा के कई मूल्य और विचार बदल चुके हैं। हम आधुनिक हो गए हैं, शिक्षित हो गए हैं परन्तु हमारी संकीर्ण मानसिकता में कोई बदलाव नहीं आया वरन पूँजी की ताकत से वह और विकृत हो चुका है। प्रत्यक्ष तौर पर गौरवमयी परंपरा की बात करने वाले परोक्ष में नैतिक मूल्यों को ताक पर रखते हुए शोषण प्रक्रिया को जारी रखते है और अपनी घृणित उपभोगवादी मानसिकता को तुष्ट करने का प्रयास करते हैं। समाज के इस दोहरे चरित्र को अनावृत करती हुए कवयित्री किरण अग्रवाल लिखती हैः— "*वे अपने गौरवमयी अतीत पर मुग्ध है/ कहीं की संस्कृति नहीं है उनके देश के जैसी/ जहाँ अतिथि देव होता है/ और नारी देवी की तरह पूजी जाती है/ वे मुग्ध हैं/ और करते हैं बलात्कार बच्चियों और स्त्रियों पर।*"

कवयित्री ने बेबाक तरीके से सामाजिक विसंगति के खुरदरे यथार्थ के तिक्त अनुभव को शब्दों में पिरोया है। हम एक ऐसे समाज में रह रहे हैं जहाँ कथनी और

Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

करनी में विराट पार्थक्य है क्योंकि रक्षक ही भक्षक बन बैठा है। मनुष्य के अंतःकरण से मनुष्यता च्युत हो चुकी है। यही कारण है कि बलात्कार हमारे समय में रोजमर्रा की घटना बन चुकी है जिसकी शिकार कभी दो साल की बच्ची होती है तो कभी अधेड़ उम्र की स्त्री। यहाँ तक की यौन-कुंठित मानसिकता के शिकार लोगों के लिए न उम्र का फर्क मायने रखता है न लिंग का। निर्भया कांड, निठारी कांड, बिहार में बाल गृह में हुए यौन शोषण कुछ ऐसे उदाहरण है जो हमें भयभीत करता है। विशेषकर बच्चों की सुरक्षा आज के समय की सबसे बड़ी चिंता बनी हुई है। बच्चों के साथ होने वाले घृणित कृत्य पर कई कवयित्रियों ने अपनी तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है। जिनमें 'बच्ची की फरियाद' समकालीन चर्चित कवयित्री रंजना जायसवाल की एक मार्मिक कविता है। इस कविता में एक छोटी सी बच्ची अपने ऊपर होने वाले यौन शोषण का प्रतिवाद करती है परन्तु उसकी चीख न इंसान को संवेदित कर पाती है और न भगवान को। इसी तरह सविता सिंह 'खून और खामोशी' के मध्य यौन शोषण की शिकार दस साल की बच्ची की मनोदशा को महसूसने का प्रयास करती है :– *"दस साल की इस बच्ची के लिए/ यह दुनिया संभावनाओं के इन्द्रधनुष-सी थी/ यही दुनिया उस बच्ची को कैसी अजीब लगी होगी/ हजारों संशयों भयानक दर्द से भरी हुई/ जिसे उसने महसूस किया होगा मृत्यु की तरह/ जब उसे ढकेल दिया होगा किसी पुरुष ने/ खून और खामोशी में/ सदा के लिए लथपथ।"*

दरअसल इस तरह के अमानवीय कृत्य पुरुषवादी समाज की 'भोग ही जीवन है'। 'एक ही जीवन मिला है, भोग लो' जैसी घृणित अमानवीय मान्याताओं की परिणति ही नहीं बल्कि उनकी नैतिक पतनशीलता का प्रमाण है।

बच्चों पर होनेवाले अत्याचार, यौन हिंसा, उनकी जीवन की विवशता, बाल-मजदूरी, बाल तस्करी पर कई कवयित्रियों ने अपनी लेखनी चलाई हैं। बाल मजदूरी पर सख्त कानून होने के वावजूद वच्चों के मजदूरी कराया जाता है। तो कहीं वच्चे दो जून रोटी की जुगाड़ में स्वयं मजदूरी करने को विवश होते हैं। मनीषा झा की 'वच्चे खेलते हैं' 'तूफान ने दिया', 'बाँबीवाला लड़का', 'वेरोजगार' आदि कविताओं में हम बच्चों के जीवन के इस सत्य से परिचित हो सकते हैं। इसी तरह निर्मला पुतुल की 'आस-पड़ोस के छोटे भाईयों से', 'बिटिया मुर्मू के लिए', 'ढेपचा के वावू', अनामिका की कूड़ा बीनते वच्चे' आदि कविताएँ वाल जीवन के अनछुए पहलूओं को छूती है।

समकालीन कवयित्रियों की पैनी दृष्टि राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मनुष्यता का हनन करने वाली प्रत्येक छोटी-बड़ी घटना पर रही है। हिन्दी साहित्य जगत में कई कवयित्रियाँ सामाजिक कार्य में संलिप्त है जिनमें कात्यायनी, रमणिका गुप्ता आदि का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। कात्यायनी की कविताओं पर विचार करते हुए आलोचक विष्णु खरे एक बात कहते हैं जो कि अवलोकनीय है। 'वे कविता में ही नहीं, अपने जीवन में सिर्फ नारी मुक्ति नहीं, मानव मुक्ति के सक्रिय आंदोलन से जुड़ी हैं और अविभक्त दृष्टि से समाज को देखना जानती हैं इसलिए उनमें पुरुष मात्र से घृणा और दुश्मनी करने वाला बचकाना नारीवादी मर्ज नहीं है।"

आलोचक के कथन से जाहिर है कि कवयित्रियों की रचनात्मक सीमा तथाकथित नारीवाद तक सीमित नहीं है। उनकी सृजनात्मक दृष्टि अपने समय के सभी गंभीर मुद्दों के प्रति चौकस है। उनके लिए अपनी पीड़ा से वड़ी सामाजिक पीड़ा है। 'मनुष्यता की रक्षा के लिए/ कहना नहीं सहना तुरंत वंद कर दे' कहने वाली सामाजिक कार्यकर्ता और मुखर कवयित्री कात्यायनी अमानवीयता को मौन होकर नहीं देख सकती, न ही इसे ईश्वरीय लीला मानकर मौन साध सकती है। अमानवीय ताकतों के विरुद्ध उनका तीव्र प्रतिरोध उनकी कविताओं में देखा जा सकता है। उनका 'जी

Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

चाहता है...'।

"कि सोमालिया और सरगुजा में/ भूखे मरते बच्चों के बारे में/ सीधे-सीधे कुछ कहें,/ चर्चा करें इराक में अमेरिकी बमबारी की/ और लॉस एंजेल्स के दंगों की।/ आज जी चाहता है/ हँसने को ठठाकर पर्यावरण-सम्मेलन पर,/ उग्र इच्छा होती है कि/ जार्ज बुश के पिछवाड़े एक पलीता लगा दें।/ जी चाहता है/ आज पेरू में जारी मुक्ति-युद्ध की/ और आंध्र में जारी मुक्ति युद्ध की/ खुलकर बातें करने को।"

स्पष्ट है कवयित्री अपने कवि-कर्म के मानवीय दायित्व से बिल्कुल विमुख नहीं होना चाहती। वह जनविरोधी शक्तियों से मुठभेड़ करती है और इसी क्रम में वह उन घटनाओं के विरोध में अपनी आवाज उठाती है जिससे मानवता आहत है चाहे वह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 1990 के आसपास सोमालिया में व्यवस्था की नाकामी से फैली अराजकता, भूखमरी और गृह-युद्ध की घटना हो, इराक में अमेरिका का आतंकी हमला हो या राष्ट्रीय स्तर पर गुजरात दंगा हो, गोधरा कांड हो या रोजमर्रा की प्रायोजित हिंसात्मक घटनाएँ कवयित्री कात्यायनी का स्वर मुखर और आलोचनात्माक रहा है। गुजरात दंगों पर उन्होंने 'गुजरात-2002' शीर्षक से चार कविताएँ लिखीं है जिसमें हम न केवल उस अमानवीय दृश्य को प्रत्यक्ष देख सकते हैं, उस घटना पर तत्कालीन शासन व्यवस्था के प्रति कवयित्री की तीखी प्रतिक्रिया भी देख सकते हैं। '2010 में निराशा, प्रेम, उदासी और रतजगे की कविता के बारे में कुछ राजनीतिक नोट्स' शीर्षक से लिखी गई कविता में सामाजिक-राजनीतिक विसंगतियों के कई दृश्य दिखाई पड़ते हैं। इसी तरह सविता सिंह की 'नीला दाग', 'कल्ल की रात कल ही गुजरी है', 'जो कोई भी नेक इंसान कहेगा' पंखुरी सिन्हा की "हामिद कारजाई के देश का चुनाव' जैसी कविताओं में राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर घटित अमानवीय हिंसात्मक समाज जीवंत हो उठा है।

समकालीन कवयित्रियाँ अपने रचना-कर्म के प्रति गहन रूप से प्रतिबद्ध है। उनकी चेतना समाज में हाशिये पर रखे गए किसान-मजदूरों से आबद्ध है। पूँजीवादी शक्तियाँ किसान-मजदूरों के प्रति अत्यंत निर्मम है। इतनी निर्मम कि उनके मुँह से निवाला तक खींचने में परहेज नहीं करती। पति-पत्नी दोनों भरपेट भोजन के लिए मजदूरी करते हैं पर अपनी स्थिति में बदलाव नहीं ला पाते हैं मानों भूखे रहने का श्राप उन्होंने जन्मगत पाया हो। ज्योति चावला की 'संबंध' कविता इसी सत्य को शब्दों में उद्घाटित करती है-*"वे करते हैं मजदूरी साहूकार की/ सपत्नीक और पाते हैं बदले में/ दस किलो चावल और मात्र चालीस रुपए/ जिनके सामने मुँह बाये खड़े हैं/ पूरे सात दिन और घर के छह जन।"*

एक तरफ वह समाज है जो पिज्जा-बर्गर पर एक दिन में हजारों रुपया खर्च कर देता है और वर्त्तमान समय में एक यह भी समाज है जिसे पेट भर भात भी नसीब नहीं। हमारी समाज व्यवस्था में श्रमिक वर्ग आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से नेपथ्य में है। उसके श्रम पर सारी व्यवस्था टिकी हुई है बावजूद इसके उसकी भूमिका को महत्त्वहीन माना जाता है। 'बाहामुनी' कविता निर्मला पुतुल की इस सन्दर्भ में एक उल्लेखनीय कविता है। मजदूरों के जीवन के विरोधाभास को बाहामुनी के बहाने इस कविता में प्रमुखता से उभारा गया है। शादी-ब्याह में हजारों लोग पत्तल पर सुस्वादु भोजन का सपरिवार आनंद लेते हैं पर उन हजारों पत्तलों का निर्माण करने वाले हाथ अपना और अपने परिवार का पेट भरने में असमर्थ हैं-*"तुम्हारे हाथों बने पत्तल पर भरते हैं पेट हजारों/ पर हजारों पत्तल भर नहीं पाते तुम्हारा पेट।"*

वर्त्तमान समय में चाय राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक बहुत बड़ा उद्योग है। हमारे देश से विदेशों में करोड़ों का चाय निर्यात किया जाता है। यह घर-घर में अपनी पैठ बनाए हुए हैं। आज सेहत के प्रति सजग

Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

लोग ग्रीन-टी को अपना रहे हैं पर विडंबना यह है कि चाय-मजदूर दयनीय स्थिति में है। उनका जीवन मानों साक्षात नरक है। पूँजी के मद में पूँजीपति मानवीय संवेदना को ताक पर रख इनका शोषण करते हैं। चाय मजदूरों की वेदना को शब्द देती हुई कवयित्री मनीषा झा 'हम मजदूर हैं' शीर्षक कविता में लिखती है:–

"हम आए नहीं हम लाए गए हैं
इसलिए हमें मान दो
मर्यादा दो, सम्मान दो
मजदूर हैं तो क्या हुआ
... ...
सभ्यता के शिखर पर
कुछ रहे न रहे
लहलहाते रहेंगे
चाय के पौधे
हमारे ही नाती-पोते के बल पर।"

इन पंक्तियों में चाय मजदूरों की इस पेशे के प्रति एकनिष्ठता, कर्मठता, आत्मीय संबद्धता बहुत ही खूबसूरत ढ़ंग से उजागर हुई है। चाय मजदूरों के लिए यह सिर्फ पेशा नहीं है। चाय बागानों में उनकी आत्मा बसती है तभी तो सामाजिक और आर्थिक विपन्नता के बावजूद उनकी पीढ़ियाँ कर्मरत है।

भूमंडलीकरण की बयार में अन्नदाता किसान की स्थिति दयनीय हो चुकी है। कठोर श्रम से उपजाये अन्न को उचित मूल्य न मिल पाने के कारण के लागत मूल्य भी नहीं निकल पा रहा है। आज किसान कर्ज में डूबे हुए हैं। अपने परिवार का पेट भरने में असमर्थ किसान सपरिवार आत्महत्या करने को विवश हो चुके हैं। कवयित्री सविता सिंह की 'अन्त' कविता में कर्नाटक के एक किसान परिवार के माध्यम से संपूर्ण किसानों की विडंबनात्मक स्थिति को देखा जा सकता है :–

"कर्नाटक के एक अँधेरे गाँव में/ जीवन के खेल समाप्त करने की तैयारी/ कर रहा है एक किसान परिवार/ जमीन पर चटाई डाली जा रही है/ कटोरे में जहर घोला जा रहा है।"

पूंजीपति और राजनेता इतने पर भी संतुष्ट नहीं है। वे प्रत्यक्ष में किसानों की स्थिति को सुधारने और कर्जमाफी का वादा करते हैं और परोक्ष में विकास के नाम पर उनके खेत हड़पकर पूँजी का खेल खेला जाता है। नीलेश रघुवंशी की कविता 'सड़क' इस खेल को उघारकर रख देती :– *"जिन रास्तों और गाँवों के नाम रजिस्टर पर/ सड़के नहीं जाती उन तक/ जाते हैं सिर्फ धुँआ और कालिख/ बदल जाते हैं जो आंकड़ों में/ नक्शे में दौड़ती ये सड़के कहीं नहीं पहुँचाती/ जन्मजात दुश्मनी है डामर और पानी में/ सड़क सोने की खान है खाऊ ठेकेदार के लिए।"*

सड़क निर्माण के नाम पर भ्रष्टाचार का खेल हमारे समाज की कड़वी सच्चाई है।

समकालीन कवयित्रियों की दृष्टि प्रकृति और पर्यावरण पर होने वाले हमले पर भी जाती है। पर्यावरण संकट आज गहराता जा रहा है। जल, जंगल और जमीन के बिना हमारा अस्तित्व बेमाने है। बावजूद इसके प्रकृति और पर्यावरण पर जबरन हमले हो रहे हैं। प्राकृतिक संसाधनों का अतिरिक्त दोहन हो रहा है। जंगल के असली निवासी पशु-पक्षियों की को अपने ही घर से बेदखल होना पड़ रहा है। विकास की आड़ में पूंजीपति किस तरह खेतों को, चायबागानों को खत्म कर मॉल और लैट कल्चर को प्रोत्साहित कर रहे हैं इसे भी हम समकालीन कवयित्रियों की रचनाओं में देख सकते हैं। इस सन्दर्भ में मनीषा झा की कविता 'तोते' अवलोकनीय है:–

"टें टें टें टें
रोते हैं तोते
... .
अब साफ कर ली गई है
वह जगह
जो तोतों की थी वह आदमी की होगी
प्लान हो चुका है पास

Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

बनेगा एक खूबसूरत बहुमंजिला मकान
ऊपर होंगे लैट्स खुले हवादार
नीचे होंगी दूकानें
मल्टीनेशनल कम्पनियों के रंगविरंगी विज्ञापन
साबित करेंगे आदमी के आदमी होने का।''

आज चारों ओर इंसानों और तकनीक का भीड़तन्त्र व्याप्त है। आदमी प्रकृति को नष्ट कर अपने आदमीयत का प्रमाण देना चाह रहा है जो कि उसकी सबसे बड़ी भूल है।

प्रकृति का अभिन्न अंग नदी हमारी संस्कृति है, हमारी सभ्यता है परन्तु मनुष्य की भोगवादी दृष्टि और बाजारवादी नजरिये के कारण नदी बेबस और लाचार दिखती है। छोटी नदियों का तो अस्तित्व ही मिट चुका है। कई नदियाँ कारखानों की जूठन खाकर अपनी पहचान खो चुकी है। वर्त्तमान समय में पानी का संकट गहरा रहा है पर सिर्फ आम आदमी के लिए क्योंकि पूंजीपति के लिए यह एक बहुत बड़ा व्यवसाय बन चुका है। प्रकृति को अपनी चेतना से अभिन्न मानने वाली समकालीन कवयित्री मनीषा झा की कई कविताएँ प्रकृति की व्यथा को शब्द देती है। प्रकृति पर होने वाले हमले से वह उद्विग्न होती है। नदी की व्यथा से पीड़ित मनीषा झा लिखती है– *''बहुत सफाई से कोई खुदवा रहा है / नदी की आत्मा / नदी सिसक रही है घायल होकर।''*

जल संरक्षण के लिए प्रतिवद्ध, सूखी नदियों को उनकी दुर्दशा से मुक्त कराने वाले पानी बाबा (WATER MAN) के नाम से विख्यात मैगेसेसे पुरस्कार, 'स्टॉक होम वाटर' अवार्ड जैसे कई प्रतिष्ठित सम्मान से सम्मानित राजेन्द्र सिंह का मानना है कि हमारी लापरवाही और भोगवादी मनोवृति के कारण आने वाले समय में जल युद्ध की संभावना धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है। उनके अनुसार-''इक्कीसवीं सदी विश्व जल युद्ध की सदी है। इसमें खेती और उद्योगों के बीच, गाँव और शहरों के बीच तथा गरीब और अमीर के बीच लड़ाई झगड़े बढ़ेंगे। गाँव से पलायन और शहरों में बढ़ते जन दवाव के बीच जल की जरूरत पूरी करना कठिन होगा। तव जल बाजार बनेगा जल बाजार ही जल लूट को बढ़ाएगा। जल की लूट ही जल युद्ध में बदलेगी।''

पर्यटन हमारी जीवन-शैली का एक अहम हिस्सा बनता जा रहा है। यही वजह है कि आज यह एक बड़ा व्यवसाय बनता जा रहा है। इस उद्योग को बढ़ावा देने के लिए हरे-भरे जंगलों को मन मुताविक किया जा रहा है। पर्यटकों की सुविधा के लिए बड़े-बड़े होटलों का निर्माण किया जाता है। शहरीकरण से ऊबे सैलानी भी प्रकृति की सुन्दरता देखकर मंत्रमुग्ध होते हैं परन्तु प्रकृति को नुकसान पहुँचाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ते। आज पहाड़ों की स्थिति दयनीय हो चुकी है। जगह-जगह प्लास्टिकों की भरमार से पहाड़ों को काफी क्षति पहुँची है। नदियों के प्राकृतिक स्रोत इन कचरों के जमाव से सूखते जा रहे हैं। वन्यजीव और जल-जीव जल प्रदूषण के कारण मर रहे हैं। मनीषा झा की 'सैलानी' 'वे खुश नहीं होते' कविता में यही तथ्य उजागर हुआ है।

भूमंडलीकरण से उपजी अपसंस्कृति, संवेदनहीनता, संवादहीनता, पर समकालीन कवयित्रियों ने गहरी चिंता व्यक्त की है। भूमंडलीकृत समय ने सामाजिकता को नष्ट कर दिया है चाहे वह मनुष्य-मनुष्य के मध्य की सामाजिकता हो या मनुष्य और प्रकृति का। तकनीकी विकास ने आत्मीयता का हनन किया। आज इंटरनेट के प्रभाव से कोई भी अछूता नहीं। मोवाइल व्यक्ति की आत्मा बन चुकी है। मॉल संस्कृति ने मनुष्य को क्षणभंगुर बना दिया है। मनुष्य कृत्रिमता की ओर आकर्षित होते-होते स्वयं कृत्रिम बनता जा रहा है। सविता सिंह भूमंडलीकरण को विनाश का पर्याय मानते हुए उसे 'नया अँधेरा' संबोधित करती है। इसकी सघनता विचलित करने वाली है क्योंकि।

''सधी हुई इस तरह कि ढँक दिया है इसने अँधेरे

Principal
Kalipada Ghosh Tarai Mahavidyalaya
PRINCIPAL
Kalipada Ghosh Tarai
Mahavidyalaya
Bagdogra

में भी दिख जाने वाली उन ढेर सारी चीजों को/ जिन्हें जानती थीं हमारी इन्द्रियाँ/ बदल दिया है इसने उन तमाम परिचित आवाजों को/ जिनमें संगीत के अलावा थीं चुम्बनों और मनुहारों की/ अस्फुट ध्वनियाँ।''

दिनकर ने 'हृदय के देश' के पीछे छूट जाने पर गहरी चिंता व्यक्त की थी परन्तु आज स्थिति यह है कि हृदय मृतप्राय हो चुका है। जीवन की स्वाभाविक वृत्तियों से हृदय का संबंध विच्छेद हो चुका है। भावनाएँ प्रस्फुटित होती भी है तो उन्मादित रूप में। किरण अग्रवाल की कई कविताएँ इंटरनेट युग की विडंबनात्मक स्थिति को दर्शाती है जिनमें 'टेक्सटिंग करते बच्चे' और 'फ्रेश फ्रॉम ऑरचर्ड' महत्त्वपूर्ण है। जहाँ 'टेक्सटिंग करते बच्चे' कविता में फेसबुक, वाट्सअप जैसे सोशल मीडिया के बढ़ते इस्तेमाल से पनप रही वाचिक संवादहीनता की स्थिति को दर्शाया गया है वहीं 'फ्रेश फ्रॉम ऑरचर्ड' में तेजी से बढ़ती फेसबुकिया संस्कृति की विडंबना को चित्रित किया गया है। वह लिखती है।

''अब फैल रही हैं आकांक्षाएँ
एक्सलरेटिंग यूनीवर्स की तरह
ठंडी पड़ती जा रही हैं संवेदनाएँ
जटिल होता जा रहा है जीवन।''

कवयित्री ने इंटरनेट युग के विडंबनात्मक पहलूओं पर ध्यान खींचा है। अधैर्य, स्वार्थाकान्क्षा, भोगपरक मानसिकता, दिखावा आदि सोशल मीडिया के कुछ ऐसे नकारात्मक प्रभाव है जिसकी गिरत में हमारी नयी पीढ़ी है। यही वजह है कि वर्त्तमान समय में 'स्व' प्रमुख हो गया और संवेदनाएँ बर्फ की तरह ठंडी होकर जम चुकी है। कवयित्री नीलेश रघुवंशी की 'मोबाइल पर बारिश' कविता भी इसी तथ्य की ओर इशारा करती है। इंटरनेट ने हमें बहुत कुछ दिया परन्तु स्वाभाविकता छीन ली। आज हर घटना के प्रति हमारा रवैया विलक्षण है या तो हम उस घटना को खबर की तरह लेते हैं या भी उन्मादित हो जाते हैं। चाहे वह बारिश हो या किसी भी अस्वाभाविक मृत्यु। हम मोबाइल पर कमेंट और लाइक करके अपनी प्रतिक्रिया जाहिर कर देते हैं। मोबाइल ही हमारा सत्य बन गया। इसका ताजा उदाहरण सूरत के कोचिंग सेंटर की घटना है। लोग मौत का तमाशा मोबाइल में कैद करने में इतने मशगूल हुए कि मानवीय धर्म भूल गए। यह उदाहरण आज के परिवेश की कटु सच्चाई है।

समकालीन कवयित्रियों की कविताएँ अपने समय, समाज और संस्कृति का आख्यान है। अपने समय और उसमें आये बदलाव को सभी कवयित्रियों ने लक्षित किया। उनकी रचनाधर्मिता स्त्री शोषण के प्रतिकार तक सीमित नहीं है। हर मानवता विरोधी ताकतों से उनकी कविता लड़ती है। पूरी निर्भयता और प्रतिबद्धता के साथ आम आदमी से लेकर प्रकृति के हक में खड़ी होती है। एक बेहतर दुनिया, एक बेहतर समाज के निर्माण की आकांक्षा लिए समकालीन कवयित्रियाँ अपने सृजन पथ पर अग्रसर हो रही है भले लिए आज भी उनके लेखन को स्त्री विमर्श के दायरे में जबरन समेटने का प्रयास किया जा रहा हो। भले ही उनके लेखन को व्यापक सन्दर्भों में देखने से आलोचक वर्ग कतराता हो।

C/o अनंत कुमार, गौर एवसन, फ्लैट नं.-04, रवीन्द्र पल्ली मटीगरा,
जिला-दार्जिलिंग-734010, मो.-9832321080